कमलेश्वर की कहानी खोई हुई दिशाएँ में विभिन्न पात्रों की मनोवैज्ञानिक विसंगतियाँ

अरविन्द कुमार
शोध छात्र, हिन्दी विभाग,
पी. जी. कॉलेज, गाजीपुर, सम्बद्ध वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर (उ.प्र.)

शोध सार

खोई हुई दिशाएँ कमलेश्वर की श्रेष्ठ कहानियों में से एक है। जिसमें वे महानगरीय जीवन की व्यस्तता, एकरसता, अकेलेपन और अलगाव की पीड़ा को व्यक्त करते हैं। कहानी का नायक चन्दर कस्बे से दिल्ली में आता है। यहाँ आकर उसे लगता है कि उसका अस्तित्व खो गया है। जो लोग उसे पहचानते हैं वे भी अपनी व्यस्तताओं के कारण उससे निकटता प्रकट नहीं कर पाते। किसी के पास उसके लिए समय नहीं है। वह अपना अस्तित्व खोजने के लिए व्याकुल है पर इस भीड़ भरी और व्यस्त दिल्ली में वह इसी बात से भयभीत है कि उसकी पहचान खो गई है। उसे कोई पहचानता नहीं। इस कहानी में यह अकेलेपन का संत्रास, अस्तित्व के खोते जाने की पीड़ा, अलगावजन्य ऊब का भार चन्दर को पूरी तरह कुंठित कर देता है और कहानी के अन्त में चन्दर अपनी पत्नी निर्मला के पास जाता है और पूछता है, तुम तो मुझे पहचानती हो निर्मला?

स्पष्ट ही इस कहानी में अस्तित्ववाद की अनुगूंज है, क्योंकि महानगर का पूरा परिवेश उसकी पहचान का निषेध बनकर उसके बेगानेपन को और बढ़ा देता है। कभी साँझी सपनों वाली इन्द्रा का चाय में चीनी की मात्रा के बारे में पूछ लेना उसे ऊपर से नीचे तक चीर देता है। उसका बेगानापन इस सीमा तक पहुँच जाता है कि घर पहुँचने पर अपनी पत्नी के अति परिचित शरीर की सारी भौगोलिक नापतोल भी उसे आश्वस्त कर पाने में असमर्थ रहती है। यह हताशा, आत्मनिर्वासन, ऊब, वेगानापन और पराजय–बोध जैसी मनः स्थिति उसी क्षणवाद की देन हैं जो मनुष्य को इतिहास के सम्पूर्ण प्रवाह से

मुख्य बिन्दु–

व्यस्तताओं, निकटता, अस्तित्ववाद, भौगोलिक, क्षणवाद

काटकर एक क्षण विशेष में मात्र अपने लिए सीमित और सार्थक बनाकर छोड़ देता है।

शोध प्रपत्र

यह कहानी यों तो महानगरीय जीवन की व्यस्तता से उपजे अकेलेपन के संत्रास को चित्रित करती है और कमलेश्वर इसके लिए बड़ी कुशलता से वातावरण बनते हैं। वे यह भी कहते हैं कि यह वर्णन भारतीय स्थितियों की देन है, किन्तु अगर गहराई से हम इस कहानी की समीक्षा करें तो पाएँगे कि इस पर अस्तित्ववाद का ही प्रभाव है और कहानी में चित्रित स्थितियाँ बहुत बनावटी लगती हैं। एक समय था जब हिन्दी के लेखकों पर अस्तित्ववाद का प्रभाव बतौर फैशन आया था। यह उसी दौर की कहानी है। प्रथम बार पढ़ने पर यह कहानी बहुत प्रभावित करती है किन्तु जब हम इसको बार–बार पढ़ते हैं और इसके अर्थ को समझते हैं तो इसका बनावटीपन उजागर होने लगता है। इसकी अपेक्षा बरक्स कमलेश्वर की ही दिल्ली में एक मौत बहुत विश्वसनीय और सच्चे रूप में महानगरीय संवेदनहीनता का परिचय कराती है।

"बीसवीं शती के मनुष्य की नियति ही यह है कि उसकी सभी परिचित दिशाएँ खो गई हैं। खोई हुई इन दिशाओं का तीव्र अहसास शहरी आदमी को अधिक हो रहा है।"[1] शहरों में मनुष्य की भीड़ भर है, मनुष्य कहीं नहीं है। मेरे साथ कोई तो है, मुझे कोई तो पहचानता है, मैं अकेला नहीं हूँ के अहसास के बलबूते पर ही मनुष्य जी सकता है। उसकी जिन्दगी और उसके अस्तित्व की यही पहली शर्त है। आलोच्य कहानी दिल्ली के नगर बोध पर आधारित है। यह उस स्थिति की कहानी है जब कमलेश्वर अपना कस्बा छोड़कर दिल्ली जैसे विराट शहर में आते हैं। एक कस्बाई संस्कारों का व्यक्ति जब शहर में आ जाता है तो कुछ वर्ष जीकर भी वह उस शहर से अपना तालमेल नहीं बिठा पाता है।

उसी अकेलेपन और अपरिचय को मानसिकता से उपजी यह कहानी कहानीकार के तत्कालीन परिवेश यात्रा की कहानी है। रामदरश मिश्र ने ठीक ही लिखा है कि खोई हुई दिशाएँ में महानगरों के परिवेश की क्रूर, स्वार्थी, अजनबीपन से भरी महानगरीय चेतना की अभिव्यक्ति हुई है। कस्बे से आया हुआ कथानायक चन्दर

महानगर में आकर अपने को निपट अकेला और अजनवी महसूस करता है। इसी प्रकार श्री सुभाष पंत का यह मत भी अपनी जगह उचित और सटीक लगता है, जिसमें कहा गया है कि खोई हुई दिशाएँ एक ऐसी कहानी है जो सीमित सामाजिकता को वृहत्तर सामाजिकता से जोड़ती है। चन्दर का दर्द कोई मानवीय दर्द न होकर व्यवस्थाजन्य परिस्थितियों से उत्पन्न आर्थिक और सामाजिक दबाव की यातना है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि खोई हुई दिशाएँ कहानी में चन्दर के माध्यम से लेखक कमलेश्वर ने जिस पीड़ा को अभिव्यक्ति प्रदान की है, वह केवल चन्दर की ही पीड़ा नहीं है बल्कि उन हजारों–लाखों युवकों की पीड़ा है, जो कस्बों से आकर रोजगार की तलाश में महानगरों में बस गये हैं, अपनी पहचान खो चुके हैं और अब उसी पहचान की तलाश में इधर–उधर भटक रहे हैं। चारों ओर फैली अजनबी निगाहें, अनजान चेहरे और अपरिचित परिवेश उन्हें भीतर तक तोड़कर रख देता है। इस स्थिति से बाहर निकलने का कोई मार्ग उन्हें नहीं सूझता और वे अन्दर ही अन्दर एक प्रकार का संत्रास भोगते रहते हैं। यही इस कहानी का मूल प्रतिपाद्य है कहानीकार प्रस्तुत कथ्य को पाठकों तक पहुँचाने में पूर्णतः सफल रहे हैं।

"कमलेश्वर ने खोई हुई दिशाएँ नामक कहानी में महानगरों के जीवन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है। एक प्रकार से उन्होंने प्रस्तुत कहानी के माध्यम से कस्बों के परिचित और अपनेपन से युक्त माहौल की तुलना में महानगरों के अजनबीपन और बेगानेपन से त्रस्त वातावरण को प्रस्तुत किया है। लेखक इस कहानी के माध्यम से यह स्पष्ट करना चाहते हैं"[2] कि आज वैज्ञानिकता के बढ़ते हुए प्रभाव के कारण मनुष्य इतना भौतिकवादी और यांत्रिक हो गया है कि वह मानवता को पूर्णतरू भूल चुका है। ग्रामीण परिवेश और कस्बाई जीवन में जो मानवीय सम्बन्ध, स्नेह और आत्मीयता के बन्धन से जुड़े हुए दिखाई देते थे, वे आज महानगरों में कल–पुर्जों के बीच पिसकर बिखर गए हैं।

महानगरीय सभ्यता के विकास के साथ–साथ मानवीय सम्बन्धों का पानी सूख गया है। व्यक्ति स्वार्थी और आत्मकेन्द्रित हो गया है। निकट रहने वाले व्यक्ति की क्या समस्यायें हैं, वह क्यों दुःखी है? इन सब बातों से उसका कोई सरोकार नहीं है। ऐसा नहीं है कि व्यक्ति

इन बातों से जुड़ना नहीं चाहता बल्कि वास्तविकता यह है कि वह महानगरीय मशीनी जीवन की चक्की में इस तरह पिसकर रह गया है कि दूसरों से मिलने उनके समक्ष सहानुभूति प्रदर्शित करने या उनके सुख–दुःख बाँटने की बात ही तो दूर, वह स्वयं से भी नहीं मिल पाता।

कहानी का नायक चन्दर रोजगार की तलाश में अपने छोटे–से कस्बे को छोड़कर दिल्ली जैसे महानगर में आकर रहने लगता है। कस्बे से चलते समय उसने उन सभी लोगों को याद किया था, उसके परिचित हैं और दिल्ली में ही रहते हैं परन्तु यहाँ आकर जैसे उसका मोह भंग हो जाता है। वह अनुभव करता है कि वे सभी परिचित, अपरिचितों की भीड़ में कहीं खो गए हैं। यहीं से चन्दर की मानवीय सम्बन्धों की तलाश की भटकन प्रारंभ होती है। वह हर जगह संवेदना और भावना खोजता है परन्तु उसे असफलता ही प्राप्त होती है।

इसी भटकन में वह अनुभव करता है कि महानगरों का व्यक्ति अन्य व्यक्तियों के प्रति पूर्णतरू संवेदनाहीन हो गया है। उसकी किसी में कोई रुचि नहीं रह गई है। उसे लगता है कि यहाँ हर व्यक्ति मिथ्या अहंकार का शिकार है। ऐसी स्थिति में उसे अपना अस्तित्व भीड़ में खोता हुआ दिखाई देता है वह सोचता है, आस–पास से सैकड़ों लोग गुजरते हैं, पर कोई उसे पहचानता नहीं। हर आदमी या औरत लापरवाही से दूसरों को नकारता या झूठे दर्प में दबा हुआ गुजर जाता है।

"यह सारी स्थिति देखकर चन्दर को अपने कस्बे की याद हो आती है। उसके मन में एक तड़प–सी उठती है परन्तु महानगर के इस अजनबी माहौल में रहने के लिए वह विवश है। प्रस्तुत कहानी में महानगरीय जीवन का यह अमानवीय रूप और व्यक्ति का अकेलापन प्रारम्भ से अन्त तक विद्यमान है। सड़क पर हजारों लोगों की भीड़ हैं, चारों ओर बेपनाह शोर है, हर कोई जैसे किसी की तलाश में दौड़ रहा है।"[3] परन्तु कहीं अपनापन नहीं है। लोगों के ठहाके उसे खोखले प्रतीत होते हैं। वह सोचने लगता है, तमाम सड़कें हैं, जिन पर वह जा सकता है, लेकिन वे सड़कें कहीं नहीं पहुँचाती उन सड़कों के किनारे घर हैं, बस्तियाँ हैं पर किसी भी घर में वह नहीं जा सकता। उन घरों के बाहर फाटक हैं, जिन पर कुत्तों से सावधान

रहने की चेतावनी हैं, फूल तोड़ने की मनाही है और घंटी बजाकर इंतजार करने की मजबूरी है।

इन पंक्तियों में लेखक ने स्पष्ट कर दिया है कि महानगरीय जीवन में व्यक्ति ने अपने आस–पास इतने छोटे–छोटे कटघरे बना लिए हैं कि कोई भी दूसरा व्यक्ति उसमें प्रवेश नहीं कर सकता। यहाँ व्यक्ति का जीवन इतना आडम्बरपूर्ण और औपचारिक हो गया है। कि आजादी और उन्मुक्तता जैसे शब्द बेमानी हो गये हैं। तात्पर्य यह है कि महानगर में कहीं कुछ भी अपना नहीं है। यद्यपि यहाँ सबकुछ है परन्तु अपना कुछ नहीं। इस कहानी में कहानीकार ने महानगरीय जीवन में विकसित मानवीय सम्बन्धों पर करारा प्रहार किया है। इन सम्बन्धों के स्वरूप को निम्नलिखित बिन्दुओं के अन्तर्गत स्पष्ट किया जा सकता है।

महानगरों में व्यक्ति इतना व्यस्त और आत्मकेन्द्रित हो गया है कि पति–पत्नी के सम्बन्ध भी औपचारिक और भावनाहीन बनकर रह गए हैं। यहाँ आवास की समस्या इतनी प्रबल है कि लोगों को एक–एक कमरे में पूरा जीवन गुजारना पड़ता है। कहानी का नायक चन्दर भी इसी प्रकार रहता है। जब वह सड़कों पर अपने अस्तित्व की तलाश में भटक रहा है और उसकी यह भटकन उसे परेशान कर देती है, तब वह सोचता है कि उसे घर की ओर चलना चाहिए। घर के विषय में सोचते ही उसके सामने घर का सारा दृश्य घूम जाता है। वह सोचने लगता है कि वह आज इतना विवश हो गया है कि अपने पूरे दिन के तनाव को भुलाने के लिए उन्मुक्ततापूर्वक वह अपनी पत्नी को प्यार भी नहीं कर सकता।

वह जानता है कि उसकी पत्नी निर्मला घर पर उसकी प्रतीक्षा कर रही होगी परन्तु उसके समक्ष अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए उसे कितनी जद्दोजहद करनी होगी, यह सोचकर उसका मन उदास हो जाता है पर निर्मला इंतजार कर रही होगी। वहाँ पहुँचकर भी पहले मेहमान की तरह कुर्सी पर बैठना होगा, क्योंकि बिस्तर पर कमरे का पूरा सामान सजा होगा और वह हीटर पर खाना पका रही होगी।

"उन्मुक्त होकर वह हवा के झोंके की तरह कमरे में घुस भी नहीं सकता और न उसे बाँहों में लेकर प्यार ही कर सकता है,

क्योंकि गुप्ताजी अभी मिल से लौटे नहीं होंगे और मिसेज गुप्ता बेकारी में बैठी गप्प लड़ा रही होंगी या किसी स्वेटर की बुनाई सीख रही होंगी।''[4] अगर वह चला भी गया तो कमरे में बहुत अदब से घुसेगा, फिर मिसेज गुप्ता से इधर–उधर की दो–चार बातें करेगा। तब बीबी खाना खाने की बात कहेगी और खाने की बात सुनकर मिसेज गुप्ता घर जाने के उठेंगी... और फिर उसके बाद बड़ी खिड़की का पर्दा खिसकाना पड़ेगा। किसी बहाने खुराना की तरफ वाली खिड़की को बंद करना पड़ेगा। घुमकर मेज के पास पहुंचना होगा और तब पानी का एक गिलास माँगने के बहाने वह पत्नी को बुलायेगा, और तब उसे बाँहों में लेकर प्यार से यह कह सकने का मौका आयेगा बहुत थक गया हूँ। लेकिन ऐसा होगा नहीं। इतनी लम्बी प्रक्रिया से गुजरने से पहले ही उसका मन झुंझला उठेगा और यह कहने पर मजबूर हो जायेगा, अरे भाई, खाने में कितनी देर है?

इससे स्पष्ट होता है कि महानगरों में दाम्पत्य जीवन में विद्यमान भावना, प्रेम और स्नेह भी पूर्णतः समाप्त हो गया है। वहाँ भी एक बेगानापन घर करने लगा है। यही कारण है कि चन्दर को घर जाने के विषय में सोचने पर मानसिक शान्ति प्राप्त नहीं होती बल्कि एक अनजाना–सा बोझ उसके मन में सवार हो जाता है।

हम जानते हैं कि कस्बों और गाँवों में सभी लोग पूरे खुले दिल से पड़ोसी धर्म का निर्वाह करते हैं। पड़ोसियों की परेशानी, उनकी खुशी और उनकी सभी समस्याओं का समाधान करने के लिए वे हमेशा तैयार रहते हैं। चन्दर ऐसे ही माहौल से दिल्ली आया है। यहाँ पर आकर उसे पता चलता है कि यहाँ मानवीय सम्बन्ध समाप्त हो चुके हैं। पड़ोसी की पड़ोसी के प्रति संवेदना तो दूर पहचान भी नहीं हो पाती। वह जानता है कि उसके पड़ोस में एक ओर गुलाटी और दूसरी ओर विशन कपूर रहता है। वह दोनों को नहीं पहचानता। गुलाटी से उसकी पहचान उसके थके कदमों की आहट से है, जो हर रोज रात को उसे सुनाई देती हैं और बिशन कपूर से उसका परिचय उसके नाम की प्लेट से है। हालाँकि वह पिछले लगभग दो वर्ष से इसी घर में रह रहा है परन्तु उसने आज तक बिशन कपूर की शक्ल नहीं देखी। वह रोज बिशन कपूर जर्नलिस्ट की नेमप्लेट देखकर उससे अपने परिचय की औपचारिकता निभा लेता है।

वह जानता है कि जब सामने वाली खिड़की में बत्ती जलती है और सिगरेट का धुआँ बाहर निकलने लगता है, तब बिशन कपूर घर में होता है। सुबह जब उसी खिड़की के नीचे अंडे के छिलके, डबलरोटी के रैपर और जली हुई सिगरेटें पड़ी होती हैं, तब वह व्यक्ति जा चुका होता है। चन्दर सोचने लगता है कि जिस पड़ोसी की उसने आज तक शक्ल नहीं देखी, प्रति प्रेम और विश्वास जैसी बातों का तो प्रश्न ही कहाँ उठता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि उसके लेखक ने महानगरीय जीवन का जो चित्र इस कहानी में प्रस्तुत किया है, उसमें पड़ोसी सम्बन्ध बिल्कुल खोखले और आधारहीन चित्रित किए गए हैं।

"कमलेश्वर ने खोई हुई दिशाएँ कहानी में जिन मित्र–सम्बन्धों को प्रस्तुत किया है, वे भी खोखले और आधारहीन हैं। चन्दर जब अपने दिनभर की मुलाकातों को डायरी में लिखता है और उसी के अनुसार प्रतिदिन अपनी दिनचर्या प्रारम्भ करता है, उसी सन्दर्भ में वह भटकते हुए कभी रेस्टोरेन्ट में जा बैठता है, तो कभी किसी पार्क में समय गुजारता है।"[5] इस दौरान उसकी मुलाकात आनंद से होती है। उसे आनंद का व्यवहार बिल्कुल अच्छा नहीं लगता, क्योंकि वह बनावटी और किताबी बातें करता है। उसके लिए मित्रता केवल समय बिताने का एक माध्यम है। ऐसा लगता है कि जब उसे अपना फालतू समय बिताना होता है, तभी वह चन्दर से बात करता है। आनंद और चन्दर के बीच का यह संवाद देखने योग्य है।

आनंद आते ही किताबी तरीके से कहेगा, यार, तुम्हारे बाल बहुत खूबसूरत हैं, बिलक्रीम लगाते हो? लड़कियाँ तो तबाह हो जाती होंगी। और तभी चन्दर को सामने पाकर आनंद रुक जाता है, हैलो, यहाँ कैसे? क्यों लड़कियों पर जुल्म ढा रहे हो? सुनकर उसे हँसी आ जाती है। किधर से आ रहे हो? डायरी जेब में रखते हुए वह पूँछता है। आज तो यूँ ही फँस गए। आओ एक प्याला कॉफी हो जाए। आनंद कहता है, फिर एक क्षण रुककर वह दूसरी बात सुझाता है, या और कुछ चन्दर इसका मतलब समझकर न कर देता है। वह जोर देता है, चलो फिर आज तो हो ही जाए, क्या रखा है इस जिंदगी में? कहते हुए वह झूठी हँसी हँसता है और धीरे से हाथ दबाकर पूँछता है, प्लीज, इफ यू डॉन्ट माइन्ड, कुछ पैसे हैं? उसके

कहने में कोई हिचक नहीं है और न उसे शरम ही आती है। बड़ी सीधी–सी बात है, पैसे कम हैं।

इसी प्रकार उसे इन्द्रा की मित्रता याद आती है। जब वह कस्बे में था, तब वे दोनों कितने खुले दिल से मिला करते थे और आत्मीयता भरी बातें किया करते थे परन्तु जब वह इन्द्रा से दिल्ली में मिला, तब उसकी वह आत्मीयता न जाने कहाँ खो गई। कुछ समय बाद वह फिर इन्द्रा के घर जाता है। वह उसे बड़ी अच्छी तरह से बिठाती है और फिर अपने पति के देर तक न आने के लिए चिन्ता व्यक्त करती हैं और चन्दर से चाय के लिए पूछती हैं। नौकरानी चाय लेकर आती है। उसकी आत्मीयता देखकर चन्दर को लगता है। कि मानो उसकी सारी थकान दूर हो गई हैं और उसके मन का अकेलापन भी समाप्त हो गया है। इसी बीच उसे इन्द्रा की परिचित आवाज सुनाई देती है। वह पूँछ रही है कि चाय में चीनी कितनी डालूँ? अपरिचय का प्रतीक यह प्रश्न चन्दर को अन्दर तक तोड़कर रख देता है। वह सोचने लगता है कि इन्द्रा भी अब पहले जैसी नहीं रही।

नौकरानी आकर चाय रख गई। इन्द्रा ने प्याले सीधे करके चाय बनाई, तो वह उसकी बाँहों, चेहरे और हाँथों को देखता रहा... सब कुछ वही था, वैसा ही था... चिर–परिचित । तभी इन्द्रा ने पूछा, चीनी कितनी दूँ? और एक झटके से सबकुछ बिखर गया, उसका गला सूखने–सा लगा और शरीर फिर थकान से भारी हो गया। **"माथे पर पसीना आ गया। फिर भी उसने पहचान का रिश्ता जोड़ने की एक नाकाम कोशिश की और बोला, दो चम्मच। और उसे लगा कि अभी इन्द्रा को सब कुछ याद आ जायेगा और वह कहेगी कि दो चम्मच चीनी से अब गला खराब नहीं होता?"[6]**

पर इन्द्रा ने प्याले में दो चम्मच चीनी डाल दी और उसकी ओर बढ़ा दिया। जहर के घूँटों की तरह वह चाय पीता रहा। कहानीकार ने प्रस्तुत कहानी में अन्य मानवीय सम्बन्धों का खोखलापन भी अभिव्यक्त किया है। उन्होंने बताया है कि महानगरीय जीवन में यांत्रिकता, कृत्रिमता और स्वार्थपरता इतनी अधिक बढ़ गई है कि परिवेश, परिवार और मानवीय सम्बन्धों में आत्मीयता समाप्त हो गई है। बच्चों और माताओं के बीच के सम्बन्ध भी अब पहले जैसे स्नेहपूर्ण नहीं रहे कनॉट प्लेस में खुले हुए लॉन हैं। तन्हा पेड़

हैं और उन दूर–दूर खड़े तन्हा पेड़ों के नीचे नगर निगम की बेंच हैं, जिन पर थके हुए लोग बैठे हैं और लॉन में एकाध बच्चे दौड़ रहे हैं। बच्चों की शक्लें तो बहुत पहचानी सी लगती हैं, पर गोलगप्पे खाती हुई उनकी मम्मी अजनबी हैं, क्योंकि उनकी आँखों में मासूमियत और गरिमा भरा प्यार नहीं है... उसके शरीर में मातृत्व का सौन्दर्य और दर्प भी नहीं है..उसमें सिर्फ एक खुमार है और एक बहुत बेमानी और पिटी हुई ललकार है, जिसे न तो नकारा जा सकता है, न स्वीकार किया जा सकता है। वह ललकार सब कानों में गूँजती है और सब बहरों की तरह गुजर जाते हैं।

इसी प्रकार मोटर गैराज वाले व्यक्ति के अपने कारीगरों से सम्बन्ध, रेस्टोरेन्ट के मालिकों के अपने ग्राहकों से सम्बन्ध भी इतने ही खोखले और बेमानी है। वह जानता है कि वह किसी से मिलने भी जायेगा, तो उसे पहले फोन करके मिलने के लिए समय लेना होगा।

रिजर्व बैंक से पैसा निकालने के लिए लाइन में लगना होगा और मनीआर्डर करने के लिए पोस्ट ऑफिस में भीड़ से जूझना होगा। वह किसी को नहीं जानता। उसके चारों ओर एक अपरिचित परिवेश होगा। वह सोचने लगता है। एक क्षण की जान–पहचान का सिलसिला सिर्फ पेन होगा, जो कोई न कोई दो हरुफ लिखने के लिए माँगेगा और लिख चुकने के बाद अपना खत पढ़ते हुए वह बायें हाथ से उसके कलम लौटाकर शायद धीरे से थैंक्यू कहेगा और टिकिट वाले काउन्टर की तरफ बढ़ जायेगा।

गिलॉड रेस्टोरेन्ट में यह एक जोड़े को भीतर आते हुए देखता है। महिला सजी–संवरी है और आदमी के चेहरे पर अजीब–सा गरूर है परन्तु दोनों में कोई तालमेल दिखाई नहीं देता। उनकी आत्मीयता सिर्फ इतनी है कि जब महिला बैठने के लिए मुड़ी, तब उस साथ आले आदमी ने उसकी कमर पर हाथ रखकर उसे सहारा दिया। उनकी बातचीत और चाल–ढाल में कहीं कोई आत्मीयता या अपनापन नजर नहीं आ रहा। इससे स्पष्ट होता है कि मानवीय सम्बन्धों में खोखलापन बढ़ने लगा है। यही खोखलापन चन्दर को पीड़ित करता है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि खोई हुई दिशाएँ कहानी में कहानीकार कमलेश्वर ने महानगरीय जीवन की वास्तविकता को प्रस्तुत किया है। महानगरों का भीड़ भरा वातावरण, सुबह से शाम तक की आपा–धापी स्वार्थ, कृत्रिम व्यवहार, अजनबीपन, बेगानापन और यांत्रिक दिनचर्या के कारण मनुष्य एक पूर्णतः अपरिचित वातावरण से घिर गया है और उसके चारों ओर एक अनजाना अकेलापन व्याप्त हो गया है। अकेलापन इस कहानी का एक महत्वपूर्ण सन्दर्भ है, जिसकी अभिव्यक्ति लेखक ने बड़ी सूक्ष्मता से की है। कहानीकार ने इसके साथ ही महानगरीय जीवन की सदी और मानवीय सम्बन्धों के खोखलेपन पर भी करारा व्यंग्य किया है।

कमलेश्वर ने खोई हुई दिशाएँ नामक कहानी में वर्तमान समय के मनुष्य की मनोदिशा को व्यक्त किया है। आज का मानव धीरे–धीरे अपने मूल्यों को खोता जा रहा है।

संदर्भ सूची

1. कमलेश्वर, खोई हुई दिखाएँ, पृ. 143
2. वहीं, पृ. 147
3. वहीं, पृ. 141
4. वहीं, पृ. 141
5. डॉ. रामदरश मिश्र, हिन्दी कहानी, एक अन्तरंग पहचान, पृ. 51
6. वहीं, पृ. 53